ज्ञान तत्व 194

(क) लेख तिल का ताड़ के अन्तर्गत राठौर रूचिका प्रकरण की समीक्षा
(ख) शिवकुमार खंडेलवाल द्वारा कार्य की प्रशंसा।
(ग) रविन्द्र पोद्दार केउत्तर में साहित्य, धर्म, राजनीति, समाज आदि की समीक्षा
(घ) चंद्रपाल सिंह जी के द्वारा लोकतंत्र और तानाशाही, रामानुजगंज के प्रयोग, भ्रष्टाचार की समीक्षा के प्रश्न का उत्तर।
(च) राजठाकरे को बढ़ाने के खतरे।
(छ) गांधी हत्या भौतिक या वैचारिक।
(ज) नक्सलवाद की संक्षिप्त समीक्षा।
(झ) महंगाई की संक्षिप्त समीक्षा।
(ट) हमारी मूल समस्या शिक्षा का अभाव या गरीबी।
(ठ) गणतंत्र दिवस,विकाश की खुशी या गुलामी का गम।
(ड) आतंकवाद और हमारे तथाकथित राष्ट्रभक्त।

(क) तिल का ताड़

भारत में यह प्रवृति लगातार बढ़ती जा रही है कि कुछ लोग अलग अलग गुट बनाकर मौके की तलाश में रहते है और कोई साधारण सी घटना को भी आधार बनाकर ऐसा तिल का ताड़ बनाते है कि कुछ दिनों तक उक्त घटना उस समय की महत्वपूर्ण घटना बनकर सुर्खियों में छा जाया करती है। भारत में ऐसे अनेक गुट तो लम्बे समय से अस्तित्व में रह रहे है किन्तु कुछ वर्षो से जबसे मीडिया ने व्यावसायिक स्वरूप ग्रहण किया है तब से वह स्वयं भी ऐसे गुट में शामिल हो गया है। स्थिति यह है कि पहले प्रिन्ट मीडिया उतना प्रभाव नही डाल पाता था और नीयत भी निम्नतम स्तर तक व्यावसायिक नहीं थी । मीडिया को यह भय था कि सीमा से अधिक नीचे उतरने पर उसकी विश्वसनीयता पर बुरा प्रभाव पड़ सकता है । अब दृष्य मीडिया के व्यावसायिक स्वरूप ग्रहण करने के बाद प्रतिष्ठा की कोई मजबूरी नही रही । पहले मीडिया लोक तंत्र का चौथा स्तंभ कहे जाने के कारण अपनी प्रतिष्ठा के प्रति चिन्तित रहता था। अब लोक तंत्र के तीन स्तंभो की छवि गिर जाने के बाद मीडिया को सुविधा हो गई है कि वह भी तो उसी भ्रष्ट लोक तंत्र का चौथा स्तंभ है । यही कारण है कि अब मीडिया अपना न्यूशेन्स वैल्यू बढाने का एक अवसर भी हाथ से नही छोडता । वह न नैतिकता अनैतिकता की बात सोचता है न सामाजिक प्राथमिकता की । वह तो चिन्ता करता है सिर्फ उच्च वर्ग में फैलने वाले मीडिया के भय के विस्तार की । यदि भय बढता है तो पूरा मीडिया इस निर्माण के पीछे एक होकर लग जाता है।

रूचिका गिरहोत्रा राठौर आई. पी. एस. प्रकरण भी वैसा ही प्रकरण बन कर सामने आया । बीस वर्ष पहले रूचिका गिरहोत्रा एक चौदह वर्ष करीब की एक नाबालिग लड़की थी । रूचिका टेनिस बहुत अच्छा खेलती थी और उसकी प्रगति की अच्छी संभावनाएँ थी । रूचिका देखने में भी बहुत सुन्दर और आकर्षक थी । उसी कालखंड में उस क्षेत्र में राठौर एक उच्च पुलिस अफसर थे, सम्भवतः डी. आई. जी. । उस समय राठौर की उम्र पचास वर्ष की रही होगी।

राठौर एक ईमानदार और दबंग अफसर माने जाते थे । कुछ जिद्दी और झक्की स्वभाव भी था । स्वाभाविक था कि ऐसे लोगों के विरोधी भी बन जाया करते है। राठौर के भी पक्ष विपक्ष में गुट बन्दी थी । राठौर खेल प्रेमी भी थे और हो सकता है कि लंगोट के भी कच्चे रहे हो ।

रूचिका उभरती हुई टेनिस खिलाडी थी और राठौर खेल प्रेमी । रूचिका एक चौदह वर्ष की सुन्दर लडकी थी और राठौर पचास वर्ष का आई. पी. एस. पुलिस अफसर पदधारी मर्द। राठौर ने रूचिका के खेल की कुछ सीमा से अधिक प्रशंसा करनी शुरू कर दी और एक दिन रूचिका के शरीर पर प्यार से हाथ भी फेरा। उस प्यार भरे हाथ फेरने में कितनी वासना थी कितना वात्सल्य यह घटनाओं से स्पष्ट नहीं होता । दोनो ही पक्षों के अपने अपने तर्क हैं किन्तु रूचिका और उसके परिवार वालों ने उसमें वासना महसूस की और उन्होने इस आधार पर रिपोर्ट कर दी। पहले तो राठौर नें इसकी सफाई दी और इन्कार किया और रूचिका के परिवार के ना मानने पर राठौर ने रूचिका परिवार पर पुलिसिया अत्याचार किये। पुलिसिया अत्याचार रूचिका के लिये नही किये गये थे बल्कि रूचिका और उसके परिवारो द्वारा राठौर के विरूद्ध की जाने वाली राजनैतिक सामाजिक कार्यवाहीं के विरूद्ध दर्ज केश वापस लेने या मुहॅ बन्द करने के निमित किये जा रहे थे ।

इस बीच रूचिका के पिता ने अपना दूसरा विवाह कर लिया जो रूचिका की ईच्छाओं के विरूद्ध था और राठौर प्रकरण के करीब चार पांच वर्ष बाद रूचिका ने आत्म हत्या कर ली । आत्म हत्या का तात्कालिक कारण पारिवारिक विवाद ही बताया गया था । भले ही बाद में उस आत्म हत्या को राठौर अत्याचार के साथ जोड़ा जा रहा है । किन्तु यह बात सच है कि रूचिका परिवार और राठौर एक दूसरे पर आक्रमण करने में पूरी ताकत से लगे हुये थे जिसमे राठौर अपने पद का दुरूपयोग भी करते थे । उन्नीस वर्षो से चल रहे इस शह और मात के खेल के बाद न्यायालय का फैसला आता है। न्यायालय आई. पी. एस. राठौर को दोषी मानकर छः माह की सजा सुनाता है और इस सजा घोषणा के बाद ही मीडिया का खेल शुरू हो जाता है। मीडिया को यह प्रकरण अपना न्यूशेंस वैल्यू बढाने के लिये सर्वाधिक उपयुक्त दिखता है। मीडिया तत्काल मामले को लपक लेती है । कहा तो यहॉ तक जाता है कि आई. पी. एस. राठौर की इस एक लाछंन के अतिरिक्त अन्य मामलो में अच्छी सेवाएॅ देखते हुये सरकार ने क्रम से हटकर भी तरक्कियॉ दीं और उन्हें राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार भी दिये गयें । इस विशेष तरक्की और पुरस्कार से प्रभावित उनके साथी पुलिस अधिकारी उनसे बहुत बैर भाव रखते थे । इन सबने भी मीडिया को आर्थिक सहायता की तथा प्रोत्साहित किया । मीडिया ने तिल का ताड बना दिया । पूरे देश का ध्यान एक अकेली घटना की ओर केन्द्रित हो गया । सरकारे विशेष सक्रिय हो गई । न्यायालय भी लीक से हटकर सक्रिय हुये । राठौर की फांसी की मांग उठने लगी । राठौर की मेडल वापसी की प्रक्रिया शुरू हुई । सात दिनों तक देश भर में इस प्रकरण की उथल पुथल मची रहीं । मीडिया का उद्देश्य पूरा हुआ । मीडिया राठौर प्रकरण को छोड कर किसी दूसरे शिकार की खोज में लग गया । तूफान ठंडा हो गया । अब किसी को चिन्ता नही कि राठौर का क्या हुआ ? अब कोई रूचिका की आत्मा की शान्ति के लिये विशेष प्रार्थना सभा नहीं कर रहा । ताड़ अब पुनः तिल बनकर अपना वास्तविक स्वरूप ग्रहण कर रहा है।

मैं स्वयं हरियाणा गया । मैने पूरे प्रकरण को नजदीक से समझा । मै न रूचिका को जानता हूँ न ही राठौर को । फिर भी मैं हरियाणा गया क्योंकि मै सच्चाई जानना चाहता था । हो सकता है कि राठौर की रूचिका के प्रति नीयत खराब हो, मैं यह भी मानता हूँ कि राठौर ने रूचिका परिवार के न्यायिक अधिकारों के संघर्ष में पद का दुरूपयोग किया । किन्तु मैं यह नही मानता कि ऐसे प्रकरणों के लिये समाधान का मीडिया ट्रायल उचित प्रक्रिया है। उन्नीस वर्ष तथा न्यायालय द्वारा दंडित होने के बाद किसी एक ऐसे प्रकरण में इस प्रकार भावनात्मक उबाल पैदा करना अपराध माना जाना चाहिये । तब और जब इससे कई गुना अधिक गंभीर अत्याचार, बलात्कार, हत्या के प्रकरण रोज हो रहे है और सक्षम अधिकारियों द्वारा दबाये भी जा रहे हैं किन्तु उस पर लेश मात्र भी ध्यान नहीं । टेस्ट केश को उछाल कर वाहवाही लूटी जा सकती है, अपना न्यूशेन्स वैल्यू भी बढ़ाया जा सकता है, उस वैल्यू का दुरूपयोग भी किया जा सकता है किन्तु व्यवस्था मजबूत नहीं की जा सकती । मेरा तो अनुभव यह है कि ऐसे प्रयत्न व्यवस्था को गंभीर नुकसान भी पहुँचाते है।

यह संपूर्ण प्रकरण मीडिया का खेल है जिसने कुछ समय के लिये हमारी भावनाओं को उद्वेलित कर दिया है और खेल खतम होते ही सबकुछ पूर्ववत् हो जायेगा तथा मदारी अपना ड़मरू लेकर महाराष्ट्र के बाल ठाकरे राज ठाकरे मुलायम अमर सिंह प्रकरण की ओर चला जायगा ।

प्रश्न यह उठता है कि ऐसा प्रयत्न सफल क्यो होता है। संपूर्ण विश्व की ही तरह भारत में भी एक व्यवस्था बनी हुई है जिसके चार अंग माने जाते है– (1) विधायिका (2) कार्यपालिका (3) न्यायपालिका (4) मीडिया जो संवैधानिक रूप से तो अंग नहीं किन्तु माना जाने लगा है। इन चारों का एक दूसरे के साथ चेक बैलेंस सिस्टम आवश्यक है । यदि एक अंग मजबूत हुआ और दूसरा कमजोर तो अव्यवस्था होगी । साथ ही यह भी विचारणीय है कि चारों का उद्देश्य समाज व्यवस्था को सुरक्षा देना होना चाहिये, गुलाम बनाना नहीं । भारत में विधायिका आवश्यकता से कई गुना अधिक मजबूत है। न्यायपालिका, विधायिका से कमजोर होते हुये भी मजबूती के लिये सक्रिय है। कार्यपालिका अभी कमजोर है जिसे विधायिका और न्यायपालिका ने कुछ दबा कर रखा है। मीडिया स्वयं में बहुत सशक्त है । रूचिका राठौर प्रकरण में विधायिका के कानून का दुरूपयोग होने से ऐसा अन्याय हुआ । न्यायपालिका ने भी दुरूपयोग करते हुये कम सजा दी । कार्यपालिका तो अपराध में लिप्त थी ही क्योकि राठौर उच्च अधिकारी था। प्रश्न उठता है कि हमारे पास और क्या उपाय है ऐसी स्थिति से निपटने का जब कोई पुलिस अधिकारी भी मनमानी करने लगे, जज भी पक्षपात करने लगे और ऐसे अन्यायी को कम सजा देने लगे तब मै मीडिया से प्रश्न पूछना चाहता हूँ कि समाधान क्या है ? मीडिया ने पिछले चुनावों में जिस तरह राजनेताओं से भारी धन लेकर स्वयं को बेच दिया, उसे ही अब सारे अधिकार दे दिये जाये ? क्या किया जाये ? यदि ऐसे मामलों में कोई और कठोर कानून बना दिया जावे तो उसका कार्यान्वयन तो जज और पुलिस अफसर ही करेगे जिसका अर्थ यह होगा कि उनकी ताकत और ज्यादा बढ़ जायेगी । राठौर ने जो दुरूपयोग किया वह उसे दी गई शक्तियों का दुरूपयोग था । अब आप पुलिस को और कानूनी ताकत बढ़ाने जा रहे है तो उस ताकत का दुरूपयोग रूकेगा कैसे ? विधायिका तो हमेशा ही चाहती है कि समाज नये नये कानून बनाने की मांग उठाता रहे और उस मांग के आधार पर विधायिका और कानून बना बना

कर समाज को गुलाम बनाती रहे । तो यह समाधान न होकर समस्या का विस्तार मात्र हुआ । गनीमत है कि रूचिका राठौर प्रकरण में मामला बलात्कार का न होकर छेड़छाड़ मात्र का था और हत्या का न होकर आत्म हत्या का था और साथ ही हमारे देश की ऐसी लचर व्यवस्था में भी उन्नीस वर्ष बाद छः माह की सजा हो गई अन्यथा राठौर सबूतो के अभाव में निर्दोष छूट भी तो सकता था। बड़ी मात्रा में इससे कई गुना गंभीर अपराधी अपने राजनैतिक आर्थिक या शासकीय पदो का दुरूपयोग करते हुये न्यायालय से निर्दोष सिद्ध हो भी रहे है और होंगे भी । राठौर मामला कोई अदभुत और विलक्षण मामला नही है। तब इस बात की खोज होनी भी आवश्यक है कि इस मामले को इतना उछालनें के पीछे उस टीवी चैनल का क्या उद्देश्य या स्वार्थ था ? स्पष्ट दिखता है कि मामला सिर्फ जनहित तक सीमित न होकर कुछ और हो सकता है।

मीडिया का स्वार्थ चाहे जो भी रहा हो किन्तु ऐसी समस्याओं का समाधान भी खोजना होगा ही । अधिकारों की छीना झपटी के वातावरण में दिये गये सुझाव वर्तमान अव्यवस्था को बढ़ाने में ही सहायक होंगे इसलिये मेरा समाज से आग्रह है कि वह भावनाओं के उबाल में आकर तिल का ताड़ और ताड़ का तिल बनाने के प्रयत्नों को समझनें की आदत डाले तो ऐसी समस्याओं का समाधान खोजने में सहायता होगी ।

पत्रोत्तर

(ख) 1. श्री शिव कुमार खंडेलवाल 5/475 इन्दिरा कालोनी, सोनीपत 131001

पत्र :– अपने लक्ष्य के प्रति अचल, सतत एवं निष्ठावान प्रयत्नों की अप्रतिम सफलता का समाचार पाकर अभिभूत हूँ । कई बार मित्रों के बीच आपके विचारों पर चर्चा करते समय वे उन विचारों से समहत तो पूरी तरह होते है किन्तु वर्तमान राजनैतिक और सामाजिक स्थिति और परिवेश को देखकर आपकी योजना को वे प्रायः आकाश कुसुम मानते रहे । आज जब आपके संस्थान से प्रेषित –लोक स्वराज्य का बीजारोपण – पत्र पढ़कर सुनाया तो वे इस अप्रत्याशित समाचार को सुनकर विस्मय विमुग्ध हो उठे । तथापि कुछ मित्रो के मन में अब भी शंका बनी हुई है कि क्या वर्तमान सत्तातंत्र इस योजना को फलीभूत होने देगा ? वे सत्ताधीष जिनकी वाहिनियों में भ्रष्टाचार का रक्त निरंतर प्रवाहित हो रहा है, क्या वे इस क्रांतिकारी परिवर्तन को सहन कर सकेगें ? आपके महान् संकल्प के प्रति मैनें उन्हें अधोलिखित शब्दों में उत्तर दिया –

अनेक बार लौट आई है लहर प्रहार कर
किन्तु क्या कभी रूकी है बार बार हार कर
और कई गुना प्रवाह ले आगे बढ़.....
ढा चुकी वही लहर न जाने आगे कितने गढ़
उसके सामने नहीं रूके बडे बडे अचल
किन्तु वे पूरी तरह आश्वस्त न हो सके ।

उत्तर :– मैनें पचपन वर्षो तक निरंतर शोध करके पचीस दिसम्बर दो हजार आठ को यह निष्कर्ष निकाला कि नई समाज व्यवस्था एक अनिवार्य आवश्यकता है। यह व्यवस्था नई न होकर पुरानी

मृतप्राय कर दी गई व्यवस्था को ही फिर से झाड़ पोछकर खड़ा करना है। इस समाज व्यवस्था के नव जागरण में सबसे प्रमुख बाधा बनेगा राज्य या राजनीति । यदि भारत में तानाशाही होती तब तो राज्य व्यवस्था को शत्रु मानकर उससे प्रत्यक्ष टकरानें की आवश्कता होती किन्तु भारत में लोकतंत्र है और राजनीति हमें वर्ग विभेद, वर्ग संघर्ष की ओर प्रेरित करके समाज व्यवस्था परिवार व्यवस्था को तोडनें का काम करती रहती है। हम यदि स्वयं परिवार व्यवस्था को राजनैतिक प्रभाव से मुक्त कर लें तो समाज सशक्त हो सकता है । राज्य व्यवस्था लाख सिर पटके किन्तु हमें ग्राम सभा सशक्तिकरण से नही रोक सकती क्योकि ग्राम सभा को संवैधानिक मान्यता भी प्राप्त है तथा अधिकार भी । यही सोचकर पचीस दिसम्बर दो हजार नौ से यह कार्य प्रारंभ किया गया है।

(ग) श्री रवीन्द्र पोद्दार 1/1 विश्व विद्यालय मार्ग, उज्जैन, म0 प्र0

अंक 191 में रमेश कृष्ण जी के पत्र के उत्तर में आपने लिखा है कि '' मैं न साहित्यकार हूँ न ही धर्मशास्त्रों का मुझे ज्ञान है '' तथा कि '' ज्ञान तत्व का उद्देश्य विभिन्न सामाजिक विषयों पर विचार मंथन तक सीमित है । '' परन्तु आपने यह स्वीकार किया है कि आपकी टीम में धर्मशास्त्री – साहित्य तथा इतिहास कार भी है, इत्यादि । एक तात्पर्य जो इससे यह निकला है कि आपके धर्मशास्त्री – साहित्यकार एवं इतिहासज्ञ मित्र आपकी उपयोगिता किन्हीं, माध्यमों से दर्शाते होगें अथवा क्या भविष्य में इस तरह (ज्ञान तत्व) की कोई धार्मिक व इतिहास संबंधित पत्रिका प्रकाशित करने का आपका या टीम का कोई उद्देश्य है ?

उपरोक्त लेख से ऐसा ही प्रतीत होता है कि आप समाज शास्त्र से धर्म एवं इतिहास को एक दम भिन्न, हेय अथवा अनुत्पादक एवं अन – अनुकरणीय (सामाजिक परिदृष्य में) मानते है ?

यहॉ धर्म से मेरा तात्पर्य कर्तव्य से है जो अपने उद्देश्य अर्थात सुख व आनन्द की प्राप्ति से है जो कि आपके प्रमुख लेख का भी प्रमुख तात्पर्य है तथा इतिहास अर्थात विशेष प्रेरणाप्रद धारणाएँ जो धर्म अथवा उद्देश्य प्राप्ति कर्तृत्व में सहयोग जिसे प्रेरणा अथवा उत्साह वर्धन कह सकते है।

अब आप बताये कि इन अर्थो में आप धर्म की व उन ऐतिहासिक घटनाओं की कैसे अनदेखी करेंगे जो कि आपके कर्तृत्व में भी अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाने जा रही है ? यह आज कल की प्रमुख आरंभिक शिक्षा का भी भाग है और इन तीनो का समावेश हमारे सभी पुरातन ग्रन्थों में भी है (सिवा वेद के जिसमें धर्म व सामाजिक तत्व है परंतु प्रारंभिक होने से इतिहास रहित है) अब इसी कारण आपने विशुद्ध धार्मिक एवं ऐतिहासिक ग्रन्थों का अध्ययन नही किया। मसलन मनुस्मृति जिसमे समाज धर्म एवं इतिहास का विलक्षण और अद्वितीय समागम है जो वेद से प्रकाशित शुद्ध अवस्था में है। आप अपने संकल्प पर फिर से विचार करेंगे ।

उत्तर :– ज्ञान तत्व एक पाक्षिक है जो ज्ञानयज्ञपरिवार की नई समाज रचना योजना का एक भाग हैं। इस पाक्षिक का पूर्वार्ध मै लिखता हूँ और उत्तरार्ध मेरे मित्र या संगठन । मै इतिहास, साहित्य, धर्मशास्त्र या विज्ञान का विशेष ज्ञाता नही । चर्चाओं मे इन विषयों पर अपने साथियों या अन्य विद्वानों से जो कुछ सुन समझ लेता हूँ वही मेरी पूंजी है। समाज शास्त्र पर मैने लम्बा शोध किया है। मेरे विचार में राजनीति शास्त्र भी उसी का एक हिस्सा होने से मैने उसे भी समझने की कोशिश की है । वर्तमान समय में साहित्य , धर्म राजनीति और इतिहास संबंधी पत्रिकाएँ तो आपकों गली गली मिल जायेंगी किन्तु समाज शास्त्र की पत्रिकाएँ शायद ही कही

मिले क्योकि समाज शास्त्र पर पिछले बहुत वर्षो से रामानुजगंज छोड़कर कही और गंभीर अनुसंधान का प्रयास नही हुआ है।

मेरे लेख का आशय यह नही कि धर्मशास्त्र, साहित्य, राजनीति शास्त्र या इतिहास किसी भी तरह हेय है, किन्तु जिस तरह इन सबने सामाजिक चिन्तन को हेय समझा वह अवश्य चिन्ता का विषय है । राजनीति ने समाज व्यवस्था परिवार व्यवस्था को इस तरह तोडा कि वह स्वयं ही समाज का प्रतिनिधित्व करने लगी। साहित्य ने समाज में ऐसी धारणाएँ फैलाई कि साहित्यकार ही विचारक होता है। (देखें ज्ञान तत्व अंक 65 दिनांक 1 से पंद्रह जून 2003) । जबकि सच्चाई बिल्कुल अलग होती है। धर्म शास्त्रियों ने तो ऐसा भ्रम फैलाया कि धर्म शास्त्र ही समाज शास्त्र है । समाज व्यवस्था को आठ आधारों पर तोडने के विभिन्न प्रयासों को चुनौती देने का प्रयास मात्र हम कर रहे है। यदि समाज छिन्न भिन्न हो गया तो न धर्म बचेगा न साहित्य और न ही राजनीति या इतिहास । इसलिये हम समाज व्यवस्था को दूषित प्रचार से सुरक्षा देने हेतु ज्ञान तत्व का विस्तार कर रहे है।

मै इतिहास की अनदेखी नही कर सकता किन्तु उससे चिपटा रहना नही चाहता । भूत काल से वर्तमान के लिये अनुभव तो प्राप्त किया जा सकता है किन्तु वर्तमान की जगह सिर्फ भूत काल की ही चिन्ता उचित नही । इसलिये मैं इतिहास का सीमित उपयोग ही करता हूँ । मनुस्मृति में अनेक अच्छी बातें हैं किन्तु वह अंतिम स्मृति नही है। यदि आवश्यक है तो उसकी समीक्षा होगी, संशोधन होंगे या नई स्मृति भी लिखी जा सकती है यद्यपि आज वैसी आवश्यकता नहीं कि उधर इतनी शक्ति लगाई जाये ।

मेरा आप से निवेदन है कि आप जो कुछ पुराना वही श्रेष्ठ है ? इस सोच से अलग हों । दूसरी ओर हम अन्य लोगों से भी निवेदन कर रहे है कि जो कुछ पुराना है वह गलत है इस सोच से बाहर हो । वर्तमान में जो उचित है वही श्रेष्ठ है इस पर सोचना शुरू करें । मेरा आपसे यह भी निवेदन है कि साहित्य, इतिहास, धर्म, राज्य, विज्ञान, स्वास्थ्य आदि के साथ साथ समाज व्यवस्था के चिन्तन को भी आगे आने दे क्योकि समाज व्यवस्था इन सबका आधार है।

(घ)श्री चन्द्रपाल सिंह, ए. 38 वैशाली नगर जयपुर राजस्थान ।

उत्तर :– देश में सभी वर्ग सामाजिक संगठन, राजनैतिक पार्टियॉ लोकतंत्र की दुहाई दे रहे है एवं संसार के अन्य देश भी भारत के लोक तंत्र की प्रशंसा करते रहते है । इस पर विचार करें कि यह लोकतंत्र ही है जहॉ पर जनता द्वारा जनता में से ही अपना प्रतिनिधि चुनने का अधिकार है। जनता के प्रतिनिधि ही कानून बनाकर शासन चलाते है। इस व्यवस्था में यदि कोई कमी रहती है तो उसका जिम्मेदार कौन होगा ? मेरा मानना है कि इसकी जिम्मेदारी उसी जनता की है जिसने गलत प्रतिनिधि को चुना हैं । इसमें व्यवस्था को दोषी ठहराकर अपनी जिम्मेदारी से मुक्त होना कहॉ तक मान्य है।

'गीता' में कर्म को प्रधानता दी गई। लोकतंत्र में जनता का कार्य अच्छे ईमानदार व्यक्ति को निर्वाचित करना है जो स्वच्छ प्रशासन आपको दे सके । भारत में निर्वाचित व्यक्ति ही शासन का मुखिया होता है जिसमें जनता की भागीदारी निहित है। लोक स्वराज्य के संदर्भ में भी मुखिया का निर्वाचन जनता द्वारा ही किया जायेगा । निर्वाचन की पद्धति कोई भी हो सकती है। यह भी उल्लेख किया जा रहा है कि जन प्रतिनिधि यदि अच्छा कार्य नही करता है तो जनता को अधिकार हो कि वह उसे वापिस बुला ले। यह भी विचारणीय बिन्दु है कि जनता द्वारा ही निर्वाचन किया जाता है एवं उसी जनता द्वारा उसे वापिस बुलाया जाय । यह प्रक्रिया भी

निर्वाचन के माध्यम से ही हो सकती है । बार बार निर्वाचन प्रक्रिया से धन एवं समय बरबाद होगा इसका भार भी जनता पर पडेगा । लोभ लालच एवं बाहुबलियों से प्रभावित होकर मत दिये जाने लगे है। ''नरेगा'' का उदाहरण सामने है जिसके ग्राम स्तर पर ही भ्रष्टाचार होने लगा है। जनता की राशि को व्यय करने वाली संस्था अथवा पदाधिकारी मौका मिलते ही ड़कार जाता है।

श्री बजरंग मुनि जी ने अपने जयपुर प्रवास के समय जानकारी दी थी कि वे रामानुजगंज नगर पंचायत के अध्यक्ष रहे थे । जनता के ठेकेदारों को उनकें ''लोक स्वराज्य'' की व्यवस्था पसंद नहीं आई जिसके कारण उनकों दोबारा अवसर नहीं मिला । यदि जनता इस व्यवस्था को स्वीकार करती तो आज एक बहुत बड़े क्षेत्र में लोकस्वराज्य व्यवस्था कायम हो गई होती ।

मेरा मानना है कि कोई भी व्यवस्था हो सर्वप्रथम ईमानदारी आवश्यक है। व्यवस्थाओं से शासन चलता है चलाने वाले यदि भ्रष्ट होंगे तो व्यवस्था भी भ्रष्ट हो जाती है । अतः भ्रष्टाचार को कैसे समाप्त किया जाय इसके लिये जनता को जागरूक करना होगा एवं आम चुनाव के समय किस व्यक्ति को चुना जाय, की जानकारी दी जाय । जनता को जानकारी होने पर ही व्यवस्था में सुधार हो सकता है।

उत्तर :– आपने चार बाते उठाई :–

1. लोकतंत्र या तानाशाही ।
2. जनता द्वारा गलत प्रतिनिधि चयन ।
3. रामानुजगंज नगर पंचायत में लोकस्वराज्य के प्रयोग का परिणाम ।
4. पहले भ्रष्टाचार दूर हो ।

(1) मै सहमत हूँ कि लोकतंत्र तानाशाही ही अपेक्षा अच्छी व्यवस्था है किन्तु लोकतंत्र अन्तिम व्यवस्था नहीं हैं और उससे भी अच्छी व्यवस्था की खोज जारी रहनी चाहिये । मेरा प्रस्ताव है कि लोकस्वराज्य प्रणाली लोकतंत्र का विकल्प बन सकती है । लोक तंत्र और लोक स्वराज्य में सिर्फ इतना ही अंतर है कि लोक तंत्र में निर्वाचित जन प्रतिनिधि शासक होते है और लोक स्वराज्य में व्यवस्थापक। लोक तंत्र में जन प्रतिनिधि संविधान के अन्तर्गत ही कार्य करने का ढोंग करते रहते है क्योकि उन्होंने तो संविधान संशोधन तक के अधिकार भी अपने पास रखे हुये है जबकि लोक स्वराज्य में संविधान निर्माण या संशोधन का अधिकार सिर्फ समाज का ही है और वह उसके लिये पृथक कमेटी बना सकता है या कोई अन्य व्यवस्था कर सकता है। लोकतंत्र में जन प्रतिनिधि को वापस बुलाने की कोई संवैधानिक व्यवस्था नहीं है जबकि लोक स्वराज्य में होगी । लोकतंत्र में अधिकार उपर से नीचे आते है और ये अधिकार देना न देना राजनेताओं के अधिकार क्षेत्र में है। जबकि लोक स्वराज्य में कुछ विशेष अधिकारों को छोड़कर बाकी सारे अधिकार प्राकृतिक रूप से नीचे होते है और आवश्यकतानुसार उपर दिये जा सकते है।

आपने दोषारोपण करने में अत्यधिक शराफत का उपयोग किया । यदि मैने किसी गलत व्यक्ति पर भरोसा किया और उसने मेरे साथ विश्वासघात किया तो मेरी भूल हो सकती है किन्तु मै अपराधी नहीं । अपराधी वह है जिसने विश्वासघात किया आप मुझे अपराधी कहे जा रहे है और विश्वास धात करने वालो को दण्डित करने की योजना पर चुप है। आप जैसे अति शरीफ लोगों ने ही तो बेड़ागर्क किया है । मै भविष्य में तो सतर्क रहूँगा किन्तु वर्तमान मे भी ऐसे विश्वास घाती को दण्डित कराने की कोशिश करूंगा । यदि संविधान में कोई प्रावधान नहीं

होगा तो वैसा प्रावधान बदलवाउंगा किन्तु ऐसे अपराधियों से हार नही मानूँगा । यदि ऐसे अपराधी को तत्काल हटाने की व्यवस्था करनी हो तो करूँगा चाहे उसके लिये जो भी खर्च हो ।

आपने लोक स्वराज्य अवधारणा को ठीक से समझा ही नहीं । हमारा चुना हुआ प्रतिनिधि बेइमान नही है बल्कि उसे जो असीमित अधिकार प्राप्त होते हैं वे उसे अन्धा बना देते हैं। आपका मत हैं कि इतना मजबूत आदमी जावे जो पावर से प्रभावित न हो । साठ वर्षो तक हम आप जैसों की सलाह पर ऐसे मजबूत व्यक्ति की तलाश करते रहे किन्तु जिसे भेजा वही अन्धा हो गया । अब हम मजबूत व्यक्ति को तलाशना छोड़कर पावर ही कम कर देंगे जिससे वह अन्धा न हो । मै नहीं समझता कि पावर कम करने से क्या बिगड़ेगा । यदि इसमें कुछ धन अधिक भी खर्च होगा तो हानि कम होगी और लाभ ज्यादा ।

आपने रामानुजगंज के प्रयोग पर टिप्पणी की । सच्चाई यह है कि जिस समय वहॉ का प्रयोग हुआ उस समय कानून के अनुसार निर्दलीय चुनावों का प्रावधान था तो मैं निर्दलीय चुना गया । मेरे बाद सीट आरक्षित भी हो गई और राज्य सरकार ने कानून बदलकर राजनैतिक दल के आधार बना दिया तो मै या जनता क्या करें । सरकार को कानून बदलने तक का अधिकार है और हम तो पालन ही करने को बाध्य थे । नया चुनाव दल आधार से हुआ जिसमें कोई आरक्षित जाति का व्यक्ति ही चुनाव लड़ सकता था । इसलिये लोक स्वराज्य फेल नहीं हुआ बल्कि उसे कानून बदलकर फेल किया गया । यदि लोकस्वराज्य होता तो उन्हें कानून बदलने के कुछ सीमित ही अधिकार होते । मैं आपको गारंटी देता हूँ कि यदि आज भी दो बक्से रख दे एक लोक स्वराज्य का और एक लोकतंत्र का । रामानुजगंज मे लोकतंत्र की जमानत जप्त हो जायेगी । लोकतंत्र वाले तो आरक्षण और दलगत प्रतिबंध लगाने की तिकड़म करते है तो बेचारा लोक स्वराज्य इस तिकड़म में क्या करें ।

आप पहले भ्रष्टाचार दूर करने की सलाह दे रहे है । मै सहमत हूँ । जब तक भ्रष्टाचार दूर नही होगा तब तक कुछ सुधर नहीं सकता । किन्तु भ्रष्टाचार दूर करने के उपाय के संबंध में मेरा मत आपसे अलग है । आप मानते है कि भ्रष्टाचार समाज में है जबकि मैं आपकी सोच के विरूद्ध हूँ । मेरा मानना है कि भ्रष्टाचार की उत्पत्ति होती है कानून से । यदि कानूनों की कुल मात्रा नियंत्रण क्षमता से अधिक होगी तो समाज में भ्रष्टाचार पैदा होगा और बढेगा । सरकार कानून पर कानून बनाती जावे और हम भ्रष्टाचार दूर करें यह कोरी बकवास है। या तो सरकार कानूनों की मात्रा कम कर दे अथवा हम सरकार के दायित्व ही कम कर दे तब भ्रष्टाचार के अवसर कम हो जावेंगे । सरकार कानून कम करना नहीं चाहती क्योकि उसे भ्रष्टाचार में सुख सुविधा मिलती है। तब हार थक कर हमने लोक स्वराज्य का नारा दिया है। हमने बहुत वर्षो तक सरकार से कहा कि सारा सरकारी करण समाप्त करके या तो निजी करण कर दो या समाजीकरण कर दो किन्तु सरकारें तैयार नहीं हुई । तब हमने कहना शुरू किया कि सरकारों के अधिकार और दायित्व ही कम हो जावे जिससे कानून बनाने का उनका अधिकार ही नीचे की इकाईयों के पास चला जावें ।

मेरा आपसे निवेदन है कि आप समस्याओं के समाधान पर गंभीरता पूर्वक विचार करें ।

वेवसाइट www.kaashindia.com की खबरें

(च) राज ठाकरे और इतिहास के सबक

05.02.2010

समीक्षक बजरंगमुनि

जब भी किसी तात्कालिक उद्देश्य के लिये अवांछित लोगों को आगे बढाया जाता है तब उसके घातक परिणाम स्वयं को ही भुगतने पडते है। स्वतंत्रता के पूर्व संघ परिवार मे गाधीं जी के विरूद्ध जो वातावरण बना था वह संघ परिवार के नियंत्रण से बाहर हो गया । परिणाम स्वरूप संघ परिवार की कोई योजना न होते हुए भी गांधी जी की हत्या हो गई।

अमेरिका ने रूस को अफगानिस्तान से बाहर करने के उद्देश्य से लादेन को सशक्त किया था। लादेन अमेरिका के नियंत्रण से बाहर हुआ और परिणाम आप सबके सामने है। इन्दिरा जी ने सिख राजनीति से परेशान होकर संत भिंडरा वाले को खडा किया। परिणाम सबके सामने है। आपरेशन ब्लूस्टार भी करना पड़ा और इन्दिरा जी की जान भी चली गई। इसी तरह राजीव गांधी ने श्रीलंका को अस्थिर करने हेतु प्रभाकरण को पाल पोसकर बड़ा किया था । प्रभाकरण भी राजीव गांधी का काल बन गया । इतिहास ऐसी अनेक घटनाओ से भरा पड़ा है । भले ही हम इतिहास से कोई अनुभव न प्राप्त करें।

वर्तमान कांग्रेस पार्टी शिवसेना को किसी तरह कमजोर करना चाहती थी । उसने फिर से उसी भूल का सहारा लिया । राज ठाकरे को काग्रेस ने जिन्दा किया । जब राज ठाकरे बाल ठाकरे को कमजोर कर रहे थे और शिव सेना का मुद्दा छीन रहे थे तब काग्रेंस पार्टी की प्रसन्नता देखते ही बनती थी। हर कांग्रेसी इसी कार्य को अपनी बहुत बड़ी कामयाबी समझ रहा था । अब राज ठाकरे कांग्रेस से हटकर अलगाव की भाषा बोलने लगे है। बाल ठाकरे और राज ठाकरे के बीच मराठी जन भावना को उभारने की प्रतिस्पर्धा इस सीमा तक चली जायेगी कि महाराष्ट्र को भारत से अलग होने तक की आवाज उठने लगे तब कांग्रेस पार्टी की चिन्ता बढ़ी है। बाल ठाकरे शरीर से भी बूढ़े हो गये है और प्रतिष्ठा से भी । संघ परिवार को भी कुछ अकल आ गई है किन्तु राज ठाकरे जवान भी है और उभरती हुई ताकत भी । कांग्रेस के समक्ष कुआॅ और खाई की स्थिति बनती जा रही है। यदि राज ठाकरे थोड़ा भी और अधिक शक्तिशाली हुआ तो वह किसी भी सीमा तक जा सकता है। न कांग्रेस उसे रोक सकेगी न ही देश की और ताकत। ऐसी स्थिति भयावह होगी और उसका क्या परिणाम होगा यह अभी बताना संभव नही । किन्तु इतना अवश्य बताया जा सकता है कि परिणाम न देश के हित मे होगा न ही कांग्रेस पार्टी के हित में।

महापुरूषो की इस बात का हमेशा ख्याल रखना चाहिये कि तात्कालिक उद्देश्यों के लिये अवांछित तत्वों को प्रोत्साहन हमेशा कष्टकारक ही होते है।

(छ) गांधी हत्या भौतिक या वैचारिक

30.01.2010

समीक्षक बजरंग मुनि

आज तीस जनवरी है। गांधी हत्या की बासठवीं बरसी । हत्या किसने की और क्यो की यह सर्व विदित तथ्य है । समीक्षा सिर्फ यह होनी है कि गांधी हत्या के बाद बासठ वर्षो में किसे क्या मिला ।

गांधी के जीवन काल में गांधी विचारों से परेशान सिर्फ दो ही समूह थे । 1) संघ परिवार जो गांधी की इस्लामिक भाई चारे की नीति से परेशान था । 2) वामपंथी जो गांधी की ग्राम स्वराज्य योजना से परेशान थे । संघ परिवार इस्लामिक भाई चारा नीति को भारतीय संस्कृति की एकक्षत्र उन्नति में बाधक मानता था और वामपंथी गांधी की नीति को राष्ट्रीयकरण, या केन्द्रित सत्ता की नीति के विरूद्ध । कांग्रेस का पटेल गुट भारतीय संस्कृति की नीतियों का पक्षधर था और नेहरू अम्बेडकर गुट वामपंथी नीतियों से सहानूभूति रखता था । संघ परिवार में बडी संख्या भावना प्रधान, अन्ध देश भक्त उच्च त्याग के प्रतीक ना समझ लोगों की थी तो वामपंथी टीम में छटे हुये सत्ता के खिलाड़ी, चालाक, सत्ता लोलुप बुद्धि प्रधान लोग ज्यादा थे । संघ परिवार गांधी को गाली देकर अपना उद्देश्य पूरा करना चाहता था तो वामपंथी परिवार गांधी की प्रशंसा करके अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था ।

ऐसे ही कालखंड में एक अतिवादी ने गांधी की हत्या कर दी । गांधी की हत्या किसी संगठन की सोची समझी योजना के अन्तर्गत न होकर एक अतिवादी प्रचार का परिणाम थी जिससे प्रभावित होकर एक देश भक्ति त्याग भाव से ओत प्रोत गोडसे ने पूरा कर दिया। गोडसे ने ऐसा कार्य कर दिखाया जैसे कोई पितृभक्त बालक पिता के गले में लिपटे सर्प की तलवार से इस तरह हत्या करता है कि पिता की गर्दन भी कट जाती है। अब उस बालक को क्षमा करें या फांसी दे यह अलग का विषय है। किन्तु पिता की जान भी चली गई और दूसरे भाई को यह अवसर भी मिल गया कि वह हत्यारे भाई को बदनाम करके पिता की सम्पूर्ण सम्पति पर स्वयं कब्जा कर ले । हुआ भी यही । संघ परिवार की दुर्दशा और नेहरू अम्बेडकर की सत्ता की पकड ने सबकुछ स्पष्ट कर दिया है। गोडसे नेहरू अम्बेडकर की अपेक्षा अधिक देश भक्त भी था और त्याग प्रधान भी । उसे सत्ता प्राप्त नही करनी थी। वह तो गांधी से मुक्ति को देश की पहली आवश्यकता समझ रहा था। गोडसे स्वयं संचालित नही था बल्कि किसी भावनात्मक प्रचार से ओत प्रोत था जिसमें देश प्रेम था, त्याग था, शराफत का आदर्श था किन्तु स्व निर्णय शून्य था, समझदारी बिल्कुल नहीं थी । दूसरी ओर नेहरू अम्बेडकर की टीम में सत्ता का मोह था । उच्च स्तरीय चालाकी थी , परिस्थिति अनुसार नीति परिवर्तन की क्षमता थी ।

गांधी हत्या होते ही संघ परिवार अपने स्वभाव अनुसार आज तक गांधी हत्या के पक्ष विपक्ष मे ही चढ उतर रहा है और नेहरू अम्बेडकर की टीम ने बासठ वर्ष बिता दिये। उन्होने देश और समाज को गांधी विचारो से इतना दूर , इतना अधिक दूर कर दिया कि अब देश उस पटरी पर चढ भी सकेगा इसमे संदेह है। यहा तक कि बासठ वर्षो मे अब कोई गांधी वादी भी गांधी की नीतियों को सुनने समझने को तैयार नही । दूसरी ओर लाख प्रयत्न के बाद भी संघ परिवार गांधी के नाम और गांधी की छवि से देश और समाज को दूर नही कर सका । आज भी

संघ परिवार में वह हिम्मत नही कि वह गांधी के विषय में उतना स्पष्ट कह सके जो अपनी आन्तरिक बैठकों मे कहता है।

एक ना समझ ने अपनी ना समझी से गांधी के भौतिक शरीर की हत्या कर दी और एक चालाक ने उक्त हत्या का लाभ उठाकर गांधी के विचारों की हत्या कर दी । एक के वारिस आज भी गांधी नाम की भौतिक हत्या का ताना बाना बुनते रहते है तो दूसरे के वारिस गांधी नाम की रक्षा के नाम पर उनके विचारों की हत्या में निरंतर सक्रिय है। आज भी देश सन् सैंतालीस की परिस्थितियों से उबर नही सका है। देश को गोडसे सरीखे देश भक्ति त्याग प्रधान किन्तु गांधी के विचारों को ईमानदारी से समझे हुये नेतृत्व की जरूरत है किन्तु उसे मिल रहा है गांधी नामधारी पद लोलुप व्यक्तियों का नेतृत्व या गांधी के नाम से ही नफरत करने वालों की शिक्षा । चिन्ता का विषय यह है कि देश के करोडों ना समझ भावना प्रधान नवयुवक आज भी उसी शिक्षा से प्रभावित किये जा रहे है जिससे प्रभावित होकर गोडसे ने भूल कर दी थी और जिसके दुष्परिणाम हम आज भी भुगत रहे है। प्रश्न उठता है कि गांधी हत्या से हमने कौन सी सीख ली ? क्या हम ऐसे अतिवादी दुष्प्रचार से आगे की पीढी को रोक पा रहे है ? क्या हमारे गांधी के समर्थक सत्ताधीश देश के युवकों को रोकने की जरूरत समझ रहे है ? निश्चित ही नहीं । उन्हें तो गांधी के नाम पर सत्ता के केन्द्रीय करण मात्र से मतलब है। वे तो चाहते है कि ना समझ देश भक्त गांधी हत्या सरीखा कोई और दूसरा प्रयोग दुहरा दे तो उनकी सत्ता का एक बार नया रीन्युअल हो जायेगा। प्रश्न यह है आज का दिन इन चालाक और ना समझ लोगो के बीच हमें क्या मार्ग दिखाता है ?

उत्तर स्पष्ट है कि हम इन चालाक और ना समझों को समझना छोडकर एक नयी समाज रचना पर तत्काल चलना शुरू कर दे जिसमें न ठगने की जगह हो न ठगे जाने की । मुझे उम्मीद है कि हमारे पाठक इस दिशा में सोचने और करने की सक्रियता दिखायेगें ।

(ज) नक्सलवाद और उसकी पहचान

25.01.2010

समीक्षक बजरंग मुनि

आज पूरा देश नक्सलवाद से चिन्तित है। मैं विकसित भारत के जिन क्षेत्रों में जाता हूँ वहाँ के श्रोता बड़ी उत्सुकता से मुझसे पूछते हैं कि नक्सलवाद क्या है ? ये लोग कैसे दिखाई देते हैं? आप उस क्षेत्र में किस तरह रहते हैं? आदि– आदि। पूरी भारत सरकार भी नक्सलवाद को भारत की पहली समस्या घोषित करके समाधान की लम्बी चौड़ी तैयारी कर रही है। बैठकें पर बैठकें और रोज नई–नई घोषणाऐं हो रही हैं। आज ही केन्द्रीय गृहमंत्री चिन्दम्बरम जी नें कहा है कि फरवरी से नक्सलवाद नियन्त्रण अभियान प्रारम्भ हो सकता है। इसकी शुरूआत छत्तीसगढ़ के सरगुजा और बस्तर क्षेत्र से होगी। विदित हो कि सरगुजा जिले का जो भाग नक्सलवाद प्रभावित है वह रामानुजगंज क्षेत्र है और सौभाग्य से मैं वहीं का निवासी होने से इस संपूर्ण महासंग्राम का प्रत्यक्षदर्शी भी हूँ। छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री रमणसिंह जी ने भी कहा है कि नक्सलियों को खदेडने के बाद इस मुक्त क्षेत्र का तीव्र विकास भी किया जायगा। दूसरी ओर नक्सलवादियों ने भी चुनौती स्वीकार करने का मन बना लिया है। उनकी भी योजना है कि वे अभियान शुरू होते ही इस क्षेत्र को छोड़ कर चले जायेगें । उनके समर्थक यहॉ समाज में असंतोष बढ़ाने का काम भिन्न

नामों और रूपो में करते रहेगे। एक वर्ष के पूर्व ही केन्द्र का भारी भरकम अभियान दम तोड़ देगा और नक्सलवाद और अधिक सक्रियता और शक्ति से स्थापित हो जायेगा । क्या होगा यह पता नही किन्तु इतना अवश्य होगा कि मेरा गृह क्षेत्र रामानुजगंज इस राष्ट्रीय युद्ध का रणक्षेत्र बनेगा जिसके अच्छे और बुरे परिणाम यहॉ के लोगों को स्वीकार करने ही होगें ।

मै स्वयं भी दोनों के संघर्ष की पृष्ठ भूमि को नजदीक से देखता रहता हूॅ । यहॉ तक कि मैने सत्ता के उच्च पदो पर रहकर भी अपने इस क्षेत्र की व्यवस्था को देखा है और नक्सलवादियों के निकट संपर्क से भी । एक ओर तो नक्सलवादी हिंसा का मुखर विरोधी होने के कारण नक्सलवादियों ने मुझे अपना प्रमुख विरोधी मान रखा था तो दूसरी ओर सरकार ने मुझे नक्सलवादी घोषित करके मुझपर सन् छियान्नवें में न्यायालय में आरोप भी लगाया था जो मैने उच्च न्यायालय तक लड़कर मुक्ति पायी । मैने दोनो ओर के आक्रमण झेलकर नक्सलवाद को समझा है। मैने पाया है कि नक्सलवाद किसी भी रूप में व्यवस्था परिवर्तन की लड़ाई नहीं है। सच बात यह है कि नक्सलवाद पूरी तरह सत्ता संघर्ष मात्र है। स्वतंत्रता के समय भारत के राजनेताओं के एक गुट ने गांधी की और दूसरे गुट ने गांधी के ग्राम स्वराज्य की नीतियों की हत्या करके समाज को गुलाम बना लिया था । इन लोगों ने मिलजुल कर समाज पर एक ऐसा संविधान थोप दिया जिसमें लोकतंत्र के नाम पर अनन्त काल तक समाज को गुलाम बनाकर रखने के सभी उपकरण मौजूद है। वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था येन केन प्रकारेण इस लोक तंत्र को सुरक्षित रखना चाहती है और नक्सलवादी इस लोक तंत्र को उखाड़ फेककर अपनी नई व्यवस्था स्थापित करना चाहते है। दोनो के बीच में संघर्ष का प्रतीक बना है भारतीय संविधान । वही संविधान जिसके नाम पर पिछले साठ वर्षो से भारतीय समाज व्यवस्था को गुलाम बनाकर रखा जा रहा है। तथा कोई भी लोकतंत्र वादी यह बताने के लिये तैयार नही कि समाज को राजनैतिक गुलामी से कब और कैसे मुक्ति मिलेगी । वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था के दलाल इस व्यवस्था से लाभ उठा उठा कर बदले में इसका गुणगान करते हुये इस अतिवादी प्रशंसा तक चले जाते है कि भारत का वर्तमान संविधान दुनियॉ का सबसे अच्छा संविधान है या भारत दुनियॉ का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। अनेक साहित्यकार या समाज सेवी तो शतप्रतिशत मतदान या मतदाताजागरण अभियान आदि के नाटको द्वारा वर्तमान व्यवस्था कि दलाली करते मिल जाया करते है और अब तो कुछ धर्मगुरू तक इस चापलूसी में शामिल हो गये है जो स्वभाविक भी है क्योकि वर्तमान लोकतांत्रिक व्यवस्था ने ही तो उन्हें इस तरह बिना मेहनत के ही उच्च सुविधाऍ संग्रह करने की छूट दी है।

सम्पन्नता सुविधा और अधिकारों की इस संवैधानिक लूट का स्वामित्व अपने हाथ में लेने का हिसंक प्रयास ही नक्सलवाद है। विभिन्न राजनैतिक दल तोकतंत्र की दुहाई देकर संवैधानिक तरीके से इस लूट के स्वामित्व पर कब्जा बनाये रखना चाहते है, तो दूसरी ओर अनेक दुसाहसी इस प्रयास में स्वयं को असमर्थ पाकर लोक तंत्र संविधान आदि का विरोध करके इस स्वामित्व को प्राप्त करना चाहते है और इस सफलता के लिये हिंसा ही सबसे अच्छा समाधान दिखता है।

नक्सलवाद और उसका समाधान

25.01.2010

समीक्षक बजरंग मुनि

आज वर्तमान लोकतांत्रिक संवैधानिक व्यवस्था नागरिकों से असीमित धन टैक्स के रूप में वसूल कर उस टैक्स का कुछ भाग सेना पुलिस पर खर्च करती है और शेष को अपने दलालो पर, अपनी व्यवस्था पर,

तथा कुछ बचा धन नागरिकों की सुख सुविधा पर खर्च करती है। यही सेना और पुलिस वर्तमान व्यवस्था को समाज को गुलाम बनकर रखने में मदद करती है। नक्सलवादी भी ठीक उसी मार्ग पर चलकर टैक्स के रूप में समाज से बेतहाशा धन वसूलते है, अपनी सेना तैयार करते है, मानवाधिकार कार्यकर्ता और साहित्यकार रूपी दलाल खड़े करते है तथा कुछ धन सामाजिक विकास पर भी लगाया करते है। उद्देश्य, लक्ष्य और मार्ग दोनो का एक ही है कि समाज को लम्बे समय तक गुलाम बनाकर रखा जाये और इस कार्य के लिये जनहित का ढ़ोंग किया जाय। गंभीरता पूर्वक विचार करिये की नक्सलवादियों की प्रशंसा करने वाले मानवाधिकार कार्यकर्ता या साहित्यकारों का खर्च कहॉ से आता है। इन सबका कोई अपना व्यवसाय नहीं है। जिस तरह कुछ दिन पहले मेघा पाटकर संदीप पांडे आदि का वस्तर में उन्हीं की भाषा में नीचे उतकर वहॉ के सरकारी एजेन्टों ने जनहित के नाम पर विरोध किया तब इन्हें अपने बचाव के लिये गांधी याद आये अन्यथा नक्सलवादियों की प्रशंसा करते समय तो गांधी कभी याद नही आते थे । इनका न गांधीवाद से काई संबंध है न ही मानवाधिकार से । ये तो सिर्फ नक्सलवादी हिंसा के समर्थन का व्यवसाय करने वाले लोग है जो गांधी और गांधीवाद की दुकानदारी करते रहते है। ऐसे लोग न समाज के लिये कभी समस्या है, न ही समाधान। ये तो समाज को गुलाम बनाकर रखने के काम में लगे संघर्षरत दो गुटों में से एक के सिपाही मात्र है। सर्वाधिक चिन्ता की बात यह है कि इस संघर्ष मे होने वाले खर्च की व्यवस्था कहॉ से होगी । न तो सरकार का कुछ खर्च होना है न ही नक्सलवादियों का । दोनो ही पक्ष जो भी बन्दूक पिस्तौल गोला बारूद खरीदेगें उसका सारा खर्च हमसे ही वसूल करेगें। इनके जो सैनिक मरेंगे उसका मुआबजा भी हमसे ही वसूला जायेगा । दोनों पक्ष हमारे लिये संघर्ष कर रहे है। किन्तु दोनों ने ही हमसे स्वीकृति या सहमति नही ली । अपने कुछ एजेन्टो की सहमति को ही जन सहमति घोषित कर दिया गया है। अभी अभी दिसम्बर माह में ही मैने एक सौ तेरह गांवों मे भ्रमण करके पाया कि गांवो की जनता वर्तमान आकंठ भ्रष्टाचार में डूबी पंचायत व्यवस्था से पूरी तरह त्रस्त है तो दूसरी ओर नक्सलवाद के नाम पर भी उसे अज्ञात तानाशाही का ही भय सता रहा है। जनता क्या करे उसे समझ में ही नही आ रहा । दोनो ही पक्ष पूरी तरह युद्ध के लिये तैयार है। युद्ध हमारे क्षेत्र में ही शुरू होना है। अज्ञात आशंकाऍ घर कर रही है। मार्ग दिख नही रहा । ऐसे ही संकट काल में रामचन्द्रपुर विकास खण्ड के लोगो ने पच्चीस दिसम्बर को दो दिनो तक बैठकर युद्ध विराम का फार्मूला निकाला कि दोनो ही पक्ष जिस समाज के लिये संघर्ष की तैयारी कर रहे है, यदि उस समाज को ही स्वतंत्रता दे दी जाये तो दोनों के बीच झगडा क्या रहेगा । समाज की पहली इकाई है परिवार और दूसरी है गांव । वर्तमान में परिवार की चर्चा हम अलग से कर लेगे। यदि समाज की प्रथम संवैधानिक इकाई ग्राम सभा को वास्तविक अधिकार सम्पन्न बनाकर उसे सक्रिय और सशक्त बना दिया जावें तो दोनो पक्षो के बीच टकराव का आधार ही क्या है ? दोनो ही पक्ष आश्वासन दे कि बिना ग्राम सभा की स्वीकृति या अनुमति के न कोई नया कानून समाज पर थोपा जायेगा न ही कोई टैक्स लादा जायेगा । यदि ग्राम सभा वर्तमान किसी कानून को भी अपने ग्राम क्षेत्र में अनावश्यक समझेगी तो उस पर गंभीरता पूर्वक विचार किया जायेगा । नक्सलवादियों का भी कोई सुझाव हो तो वे ग्राम सभा को सहमत करे और सरकार भी वही करने की घोषणा कर दे तो टकराव का कोई और कारण ही नही है। बहुत आसान सा तो मार्ग है कि दोनो पक्ष समाज की चिन्ता करना छोड़कर समाज को अपनी चिन्ता स्वयं करने की स्वतंत्रता दे दे तो हो गया समाधान। सरकार बहाना बनाती है कि गांव के लोग ग्राम सभा मे नही आते । गांव के लोग ग्राम सभा को सरकारी नाटक मानकर उस पर विश्वास ही नही रखते । नक्सलवादी ग्राम सभा पर ही भरोसा नही करके अपनी बन्दूक पर ही भरोसा करते है। दोनो ही पक्ष समाज को ढाल बनाकर एक दूसरे से सत्ता संघर्ष की तैयारी कर रहे है और चिन्ता क्षेत्र के नागरिकों को सता रही है कि इस युद्ध में उनका क्या होगा ?

मै पूरी तरह आश्वस्त हूॅ कि वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था की नीतियॉ ही गलत नही है बल्कि नीयत ही गलत है। विकास का मार्ग तो एक ढोंग है। यदि खर्च किये जाने वाले धन मे से सिर्फ कमिशन ही बन्द हो जाये तो विकास की सारी पोल खुल जायेगी । धन तो इसलिये सड़को पर बह रहा है कि उसमें सभी सत्ता सम्बद्ध तथा नक्सलवाद समर्थित प्रमुख लोगो को कुछ न कुछ कमाई होती रहती है। ये सबलोग विकास का इसलिय तो रोना रोते है । नक्सलवादी विकास की मांग करते है और विकास में बाधा भी पहुॅचाते है। दूसरी ओर सरकारी पक्ष के लोगों का बस चले तो वे विकास का सारा का सारा पैसा ही मिलकर आपस में बांट ले । साथ में दोनों ही पक्ष लगातार विकास की ही रट भी लगाते रहते है।

मैने स्वयं भी इस विषय पर खुब सोचा है। नक्सलवाद का समाधान न तो विकास है न ही बन्दूक । नक्सलवाद का एक ही समाधान है स्थानीय स्वायतता जिसका संशोधित तरीका है ग्राम सभा सशक्तिकरण । यह सशक्तिकरण न कानून से होगा न ही हिंसा से। यह सशक्तिकरण होगा ग्राम सभा का आत्मविश्वास और मनोबल बढाने से । सरकार अपने पंच सरपंच और सचिव के भ्रष्टाचार पर रोक लगा दे और यदि आवश्यक हो तो कुछ समय के लिये पूरे धन का ही आबंटन रोक दे तो संघर्ष रत दोनों ही पक्ष ग्राम सभा के महत्व को स्वीकार करने लग जायेगें । पंच सरपंच पद के लिये होने वाले संघर्ष में कही लेश मात्र भी जन सेवा का भाव न होकर शुद्ध व्यवसाय है। यदि यह व्यवसाय ही है तो नक्सलवादी भी हिस्सा खोजेगें ही । इसमे कुछ भी अस्वाभाविक नही है। मेरी तो यह सलाह है कि रामचन्द्रपुर विकास खण्ड ने नक्सलवाद के समाधान के लिये बन्दूक और विकास से हटकर जो ग्राम सभा सशक्तिकरण का प्रयोग शुरू किया है उसे दोनो ही पक्ष स्वीकार करें जिससे संभावित युद्ध की विभीषका से बचा जा सके ।

(झ) मंहगाई का दोषी कौन ?

25.01.2010

समीक्षक पंकज अग्रवाल

आज के समाचारो मे सबसे महत्वपूर्ण खोज खबर रही कि मंहगाई के लिये दोषी कौन ? अधिकांश समीक्षकों ने कृषि मंत्री शरद पवार को दोषी माना तो शरद पवार ने भी हथियार डालते हुए प्रधान मंत्री को दोषी कहना शुरू कर दिया । मैने भी अपनी बुद्धि की पुरानी यादो को टटोलना शुरू किया तो पाया कि मंहगाई के लिये सर्वाधिक दोषी रही है भाजपा सरकारे जिन्होने बिना सोचे समझे अपने कार्यकाल मे वस्तुओं के मूल्यो को इतना सस्ता कर दिया कि उत्पादक परेशान हो गये। मेरे पिता स्वयं एक किसान रहे और हार थक कर खेती बन्द कर दी । आज भी मै महसूस करता हूॅ कि उनका निर्णय सही था । मेरा खेती करना मेरी मूर्खता थी क्योकि मेरे ईमानदार प्रयत्नों का लाभ उठा कर निकम्मे लोग गुलछर्रे उडाना शुरू कर दे तो ऐसे ईमानदार प्रयत्न मूर्खता ही कहे जाने चाहिये । सन् सतहत्तर की जनता सरकार ने जिस तरह शक्कर दो रू किलो तथा सरसों तेल ढ़ाई रूपये लीटर बिकवा कर उपभोक्ताओं की वाहवाही लूटी थी वही आज मंहगाई का रोना क्यो रो रहे है। उपभोक्ता यदि उत्पादको की सह्रदयता का लाभ उठाने के अभ्यस्त हो जावे तो दोषी कौन ? वस्तुओं को सस्ता करके उत्पादकों को सबसीडी देना एक गलत पंरपरा रही है, जिसका उपयोग सभी सरकारों ने समय समय पर किया है और भाजपा सरकारे उसमे अन्यों से आगे ही रही है । यदि सूझ बूझ की नीति बनती और मूल्य वृद्धि को रोकने की अपेक्षा उपभोक्ताओं को

सबसीडी देने की योजन बनती तब न तो उत्पाद घटता न मूल्य अनिंयत्रित होते । आज बेचारा टमाटर सड़क पर मारा मारा फिर रहा है। यदि किसान टमाटर उत्पादन बन्द न करे तो क्या करें। उपभोक्ताओं के मंहगाई के एक पक्षीय प्रचार की आंधी उत्पादकों की कमर तो तोड़ सकती है, उन्हें आत्म हत्या के लिये मजबूर कर सकती है, किसानों की आत्म हत्या पर आंसू बहाने का नाटक कर सकती है, किन्तु उत्पादन नहीं बढ़ा सकती क्योकि शारीरिक श्रम करना उनका न स्वभाव है न मजबूरी। बौद्धिक श्रम द्वारा आकड़ो की खेती करके सस्ते से सस्ता खाना उनका स्वभाव है। जिसका परिणाम यदि उत्पादन की कमी के रूप में दिखे तो दोष किसका ? जो लोग मंहगाई के लिये कृषि मंत्री को दोष दे रहे है वे पूरी तरह गलत है। मंहगाई बढ़ाने का सारा दोष उन बुद्धिजीवियों उपभोक्ताओं का है जो नकली मंहगाई का हल्ला उठा उठा कर उत्पादकों के जले पर नमक छिड़कने का काम करते रहे है और आज वास्तविक मूल्य वृद्धि के लिये दोषी कौन ? की बलि का बकरा खोजने की कोशिश कर रहे है।

(ट) हमारी मूल समस्या शिक्षा का अभाव या गरीबी ? 25.01.2010

समीक्षक पंकज अग्रवाल

आज के अखबारों में समाचार छपा है कि तेंतीस प्रतिशत प्राथमिक स्कूलो में शौचालय नही है, तो चालीस प्रतिशत स्कूलो में हैण्ड पम्पों का अभाव है या इतने प्रतिशत स्कूलो में भवन नही है तो इतने प्रतिशत में शिक्षकों का आभाव है। समाचार को इस तरह हाईलाईट किया गया है जैसे शिक्षा का विस्तार ही हमारी गरीबी बेरोजगारी आर्थिक विषमता का समाधान हो और यदि शिक्षा पर अधिक धन खर्च कर दिया जावें तो भूख मिट जायेगी । मैने भी सोचना शुरू किया तो पाया कि यह बिल्कुल विपरीत प्रचार है । शिक्षा से रोजगार नही बढ़ सकता क्योकि शिक्षा रोजगार का श्रृजन नही कर सकती । शिक्षा व्यक्तिगत रोजगार वृद्धि भी कर सकती है और व्यक्तिगत जीवन स्तर कुछ व्यक्तिओं का सुधार सकती है किन्तु सामूहिक रोजगार तो श्रम ही दे सकता है, शिक्षा नहीं ।

आकड़ो को टटोलिये तो पता चलेगा कि भारत में इक्कीस प्रतिशत लोग तेरह रूपये से भी कम पर जीवन जी रहे है और हम इन तेरह रूपये पर जीवन जीने को मजबूर लोगों के अपने स्वयं के उत्पादन और उपभोक्ता वस्तुओं पर भारी कर वसूल करके शिक्षा पर खर्च बढ़ाने की योजनाएँ बना रहे है। हमारे लिये शर्म का विषय यह नही कि हमारे कितने प्रतिशत स्कूलो में शौचालय या पानी की व्यवस्था नही है । शर्म का विषय तो यह है कि हमारे कितने प्रतिशत गरीब घरो में शौचालय नही हैं या कितने प्रतिशत मुहल्लो में पानी की सुविधा नही है ? साथ ही डूब मरने की बात यह भी है कि ऐसे गरीबी रेखा के निचे रहने वालो के उत्पादन और उपभोग की वस्तुओं पर भी हम भारी कर वसूलते है क्योकि हमे शिक्षा जैसी मूलभूत आवश्यकता पर खर्च करना पड़ता है । यदि गरीबी घटेगी, जीवन स्तर सुधरेगा, पेट भरने लग जायगा तो शिक्षा अपने आप बढ़ जायेगी और यदि गरीबी , भूख, जीवन स्तर को अनदेखी करके शिक्षा को अधिक महत्व दिया गया तो एक दो प्रतिशत व्यक्ति तो प्रगति कर लेगें किन्तु समूह के साथ अन्याय हो जायेगा । आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी प्राथमिकताएँ तय करे और उन प्राथमिकताओं में गरीबी और शिक्षा का संतुलन बनावें । शिक्षको को सम्मान जनक वेतन मिले, स्कूलो की हालत सुधरे, स्कूलो बजट बढ़े चाहे इसके लिये गरीब ग्रामिण श्रमजीवी पर ही क्यो न टैक्स बढ़ाना पड़े ऐसा सोचना अनैतिक है,

अन्यायपूर्ण तथा गलत है। आप बुद्धिजीवी है इसका अर्थ यह कदापि नही है कि आप श्रम के शोषण को अनैतिक या अपराध न समझे । यदि प्राथमिकताओं को समझने में भूल हुई तो यह भूल बहुत हानिकर हो सकती है।

(ठ) गणतंत्र दिवस, विकास की खुशी या गुलामी का गम 26.01.2010

समीक्षक बजरंगमुनि

आज छब्बीस जनवरी है, गणतंत्र दिवस । ऐसा शुभ दिन जब अंग्रेजी गुलामी के अंतिम अवशेष भी भारत से विदा हो गये थे। भारत का अपना संविधान सत्तारूढ़ हो चुका था । हम स्वयं भारत के भाग्यविधाता थे। हम अपना निर्णय स्वयं कर सकते थे । आज ऐसे शुभ दिन की इकसठवीं वर्षगांठ है। खुशियों का अवसर है कि भारत तेजी से विकास कर रहा है। आम नागरिकों का जीवन स्तर उँचा हुआ है। अमेरिका जैसे सम्पन्न देश भी भारत से मित्रवत् व्यवहार बनाकर रखना चाहते है। चीन भी भारत को उस तरह गीदड़ नही मानता जैसा पच्चास वर्ष पूर्व मानता था । भारत परमाणु सम्पन्न दुर्लभ देशो की श्रेणी में शामिल है। भारतीय वैज्ञानिकों ने चन्द्रमा पर पानी की खोज का सफल करिश्मा भी कर दिखाया । भारत की विकास दर दुनियॉ के तीन चार देशों की विकास दरों से प्रतिस्पर्धा कर रही है । आज पूरे भारत का आम आदमी प्रसन्न चित्त है । केन्द्रित स्थलों पर झंडारोहण से लेकर मिष्ठान्न वितरण तक के कार्यक्रम आयोजित हो रहे है। अखबार बड़े बड़े विज्ञापनों से भरे पड़े है। हर सम्पन्न व्यक्ति अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने की दौड़ में शामिल है। कहीं कहीं दीप भी जलाये जा रहे है। कवि सम्मेलन और झांकियों की तो कोई गिनती ही नही है। पूरा वातावरण प्रसन्नता से सराबोर है।

दूसरी ओर आज का दिन वह काला दिन है जब कुछ राजनेताओं ने मिलकर एक मनमानी किताब लिख ली और उसे संविधान कहकर भारत के नागरिकों पर इस तरह थोप दिया कि वे न चाहते हुये भी सदा सदा के लिये इनके गुलाम बने रहे । राजनेताओं ने स्वयं को प्रबंधक की जगह शासक घोषित कर दिया और वोट देने के अतिरिक्त सारे अधिकार अपने पास समेट लिये । उन्होंने समाज को बांट कर रखने के सभी आठ आधारों पर पूरी सक्रियता से काम किया। परिणाम स्वरूप समाज धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्रीयता, उम्र, लिंग, गरीब–अमीर, उत्पादक–उपभोक्ता के वर्ग विद्वेष वर्ग संघर्ष में फंसता चला गया । भ्रष्टाचार दिन दूना रात चौगुना बढ़ता गया और ऐसे भ्रष्टाचार से पल्लवित पोषित लोग उछल उछल कर ज्यादा से ज्यादा गणराज्य दिवस मनाने में आगे रहने लगे । आर्थिक असमानता बढ़ती जा रही है। बुद्धिजीवी पूँजीपति, शारीरिक, श्रम का शोषण करने की नई नई योजनाएँ बनाते रहते है। बुद्धि का मूल्य बढ़ा बढ़ा कर गरीब ग्रामीण श्रमजीवी पर टैक्स पर टैक्स लगाये जा रहे है। तंत्र से जुड़ा हर व्यक्ति अपना वेतन भत्ता स्वयं बढ़वा लेता है और उसकी कोई सीमा भी नही है। दूसरी ओर वह सारा खर्च हम गुलामों से वसूल लिया जाता है। सैद्धान्तिक रूप से संविधान राज्य और समाज के बीच का द्विपक्षीय समझौता हैं किन्तु हमारे नेताओं ने उस किताब में लिख दिया कि वे लोग बिना हमसे पूछे इसमें कभी भी और कुछ भी संशोधन कर सकते है।

मैने भारत के विकास और समाज की दुर्दशा की समीक्षा की तो पाया कि दोनों ही बातो में सच्चाई है। देश लगातार प्रगति कर रहा है और समाज कमजोर हो रहा है। आज छब्बीस जनवरी को मैं क्या मानूँ ? तब मुझे एक महापुरूष की एक लाइन याद आई कि ''किसी दूसरे की अच्छी से अच्छी व्यवस्था से भी अपनी व्यवस्था अच्छी होती है। और यदि व्यवस्था करने वालों की नीयत भी खराब हो जावे तो ऐसी व्यवस्था को एक मिनट भी चलने देना हमारी कायरता का प्रतीक है''। छब्बीस जनवरी को जो अपनी व्यवस्था मानते हैं वे प्रसन्न है भी और होना भी चाहियें किन्तु जो व्यवस्था करने वालों की नीतियों के साथ साथ नीयत भी खराब मानते है उनके लिये तो यह सामाजिक गुलामी के अतिरिक्त और कुछ नहीं । मै तो स्वयं को दूसरी लाइन में मानता हूँ। आप क्या मानते है यह उत्तर देने की कृपा करें ।

(ड) आतंकवाद और हमारे तथाकथित राष्ट्र भक्त 02.02.2010

समीक्षक पंकज अग्रवाल

आज दिल्ली बम ब्लास्ट काण्ड का एक आरोपी आजमगढ़ से ही पकड़ा गया । उसी आजमगढ़ से जिसकी चर्चा पिछले वर्ष बाटला हाउस मुठभेड़ काण्ड में मारे गये मुस्लिम युवक के साथ साथ संपूर्ण भारत में इस तरह हुई थी कि आजमगढ़ जिले का संजरपुर गांव और निकटवर्ती कुछ गांव पूरे भारत में मुस्लिम आतंकवाद के केन्द्र बने हुये है। उस समय कुछ देश भक्त मुलायम सिंह यादव, अमर सिंह, जामिया मिलिया के कुलपति मुनिरूल हसन, सबाना आजमी तथा बड़ी मात्रा में मानवाधिकार कार्यकर्त्ताओं ने उक्त प्रचार को असत्य कहकर आजमगढ़ जिले को बदनाम करने की साजिश बताया था । हद तो तब हुई जब इन लोगो ने शहीद पुलिस इंस्पेक्टर की शहादत पर ही प्रश्न चिन्ह लगा दिया था । एक केन्द्रीय मंत्री ए. आर. अन्तुले तक ने उनका साथ दिया था । घटनाएँ स्पष्ट है कि उक्त संजर पुर गांव के कुछ मुस्लिम युवकों की पोल खुलते ही सम्पूर्ण भारत में हो रहे सिलसिलेवार बम धमाके बन्द हो गये । सिद्ध हो गया कि बम धमाकों के तार आजमगढ़ जिले के मुस्लिम युवकों के साथ जुड़े थे और युवकों के तार मुलायम अमर सहित पेशेवर मानवाधिकारवादियों के साथ ।

आतंकवाद की दूसरी घटना की चर्चा तीन दिन पूर्व ही समाचारों में आई कि दो तीन वर्ष पूर्व हिन्दू आतंकवाद के लिये गिरफ्तार प्रज्ञा ठाकुर और कर्नल पूरोहित ने अपनी आतंकवादी घटनाओं के लिये पाकिस्तान के मुस्लिम आतंकवादियों तक की सहायता ली थी । उस समय जब प्रज्ञा ठाकुर और कर्नल पुरोहित प्रकाश में आये तब संघ शिव सेना तथा भाजपा के लोग इन आतंकवादियों के समर्थन में उठ खडे हुये थे । इन लोगो ने भी उस बेचारे हेमन्त करकरे को गद्दार कह दिया था जिसने इस काण्ड का पर्दाफाश किया था और जो कुछ माह बाद ही बम्बई आतंकवादी हमले मे मारा गया । इन दोनों आंतकवादी हिन्दुओं की करतूतो से पहली बार हिन्दू समाज का सर झुका था किन्तु बेशर्म गिरोह बाज फिर भी सर उठाकर चलते रहे । यहॉ तक पोल खुली थी कि प्रज्ञा और पुरोहित ने इन्द्रेश जी सहित संघ के दो उच्च पदाधिकारियों की हत्या की योजना इसलिये बनाई थी कि ये दोनो संघ पदाधिकारी हिन्दू

मुस्लिम मेल मिलाप की बात करते है। दुख होता है जब संघ शिव सेना ऐसे आतंकवादियों के समर्थन में खड़ी होती है। कर्नल पुरोहित की संलिप्तता की जानकारी पाकिस्तान के एक मंत्री ने भारत सरकार को दी । इस संबंघ में हमारे कर्नल पुरोहित समर्थकों को स्थिति स्पष्ट करानी चाहिये ।

विचार करिये कि बाटला हाउस घटना में मारे गये मोहन लाल शर्मा और प्रज्ञा पुरोहित की पोल खोलने वाले हेमन्त करकरे जैसे ईमानदार कर्तव्यनिष्ठ अफसरों की प्रशंसा पूजा सम्मान की जगह मुलायम अमर सिंह सुदर्शन बाल ठाकरे इसलिये बदनाम करे क्योकि इन लोगों ने साम्प्रदायिकता की दो दुकाने खोल रखी है और दोनो पक्षो के इनके ग्राहकों की पोल खुल रही है। तो दो शहीद अफसरों के परिवार क्या सोचते होगें । इन दोनो गुटो में शामिल हिन्दू और मुसलमान कितने चरित्रवान है ? कितने देश भक्त है ? आज यह विचार करने का समय है कि समाज इन पेशेवर दुकानदारों की खुली दुकानों से कैसे मुक्त हो ? दोनों घटनाओं का संक्षिप्त विवरण कई वर्ष पूर्व प्रकाशित ज्ञानतत्व 165 तथा 169 के शीर्ष लेखों में भी पढ़े ।